Jan 2021 - Mar 2021, Vol 7, No. 1, 16-25 ISSN : 2394 -9449

Electronic Journal of Advanced Research

An International Peer review E-Journal of Advanced Research

Research Articles

ब्रिट्रिश शिक्षा प्रणाली का समीक्षात्मक अध्ययन

अजय शंकर पाण्डेय[1]

1- शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म0प्र0)

Received : 22-Feb-2021	Revised : 15-Mar-2021	Accepted : 26-Mar-2021

शोध सारांश

शिक्षा को ईसाई मिशनरियों ने प्रारम्भ किया, केवल भारत ही नहीं, अफ्रीका, अमेरिका, कनाडा तथा आस्ट्रेलिया आदि स्थानों पर भी वहाँ की सरकार के माध्यम से ईसाई मिशनरियों ने अपने धर्म के प्रसार के लिए शिक्षा संस्थाओं की स्थापना की। भारत वर्ष में जहाँ–जहाँ ईस्ट इण्डिया कम्पनी का प्रभुत्व होता गया वहाँ–वहाँ ईसाई मिशनरियों भारतीयों को शिक्षा के माध्यम से अपने धर्म का अनुगामी बनाने लगी।

प्रस्तावना

प्रसिद्ध इतिहासकार **श्री ताराचन्द्र** ने कहा है कि–18वीं शताब्दी तक भारत में रहने वाले हिन्दू और मुसलमानों ने ब्रिट्रिश कम्पनी की शिक्षा प्रणाली की गतिविधियों पर विशेष ध्यान नहीं दिया और 18वीं शताब्दी तथा 19वी शताब्दी का पूर्वार्द्ध राजनीतिक उथल–पुथल का युग था इसके परिणाम स्वरूप कम्पनी शिक्षा के क्षेत्र में अपनी योजना में सफल हुई। प्रायः लोगों का मत है कि भारत में अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली तत्कालीन ईसाई मिशनरी के क्रियाकलापों द्वारा आरम्भ हुई यूरोप की बदलती हुई परिस्थितियों के फलस्वरूप वे नवीन धर्म की स्थापना हेतु यूरोप के बाहर की धरती पर अपनी सभ्यता प्रसारित करने के लिए शिक्षा को एक सशक्त साधन मानकर अपने ढ़ंग से शिक्षा को ईसाई मिशनरियों ने प्रारम्भ किया, केवल भारत ही नहीं, अफ्रीका, अमेरिका, कनाडा तथा आस्ट्रेलिया आदि स्थानों पर भी वहाँ की सरकार के माध्यम से ईसाई मिशनरियों ने अपने धर्म के प्रसार के लिए शिक्षा

संस्थाओं की स्थापना की। भारत वर्ष में जहाँ–जहाँ ईस्ट इण्डिया कम्पनी का प्रभुत्व होता गया वहाँ–वहाँ ईसाई मिशनरियों भारतीयों को शिक्षा के माध्यम से अपने धर्म का अनुगामी बनाने लगी। अवसर का पूर्ण लाभ उठाते हुए इन मिशनरियों ने भारत के समस्त स्थानों में शिक्षा संस्थाओं की स्थापना की शिक्षा संस्थाएँ उस समय तक माध्यमिक शिक्षा तक ही सीमित थी। इन माध्यमिक विद्यालयों में पाश्चात्य पद्धति से शिक्षा प्रदान करने का कार्य प्रारम्भ किया गया। यही कारण है कि मिशनरियों को भारत में आधुनिक शिक्षा का स्तम्भ माना जाता है।[i]

नूरूल्ला एवं नायक ने स्पष्ट किया है कि मिशनरियों को भारत में आधुनिक शिक्षा का प्रवर्तक होने का सम्मान प्राप्त है।[पप] ईसाई धर्म प्रचारकों ने इस प्राचीन विद्या प्रणाली को पुनर्जीवित करने की निंदा की और इस बात पर बल दिया कि पाश्चात्य साहित्य और इसाई मत अंग्रेजी माध्यम द्वारा ही प्रसारित किया जाना चाहिये सीरामपुर के मिशनरी इस क्षेत्र में बहुत उत्साही थे।[पपप] गिराजाघर के दबाव के फलस्वरूप ब्रिट्रिश पार्लियामेंट को अपनी प्रजा के नैतिक सुधार में पहल करने का वचन देना पड़ा। यह पहल उन्हें ईसाई मिशनरियों की सहायता से करनी थी। दूरदर्शी राजनीतिक यह समझने लगे कि भारत के बाजारों को विकसित करने के लिए आधुनिक शिक्षा व समाज सुधारों को लागू करना आवश्यक है, दूसरी ओर कम्पनी के कार्यकलापों से भारत की जनता विशेषतः हिन्दुओं एवं मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को आघात पहुँचा। लेकिन ईसाई मिशनरियाँ इस बात को नजर अंदाज कर रही थी। उन्होंने 1808 में Contemprar Freading नामक पुस्तिका प्रकाशित की जिसके माध्यम से हिन्दू और मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को भड़काने का प्रयत्न किया गया जिस पर अंग्रेज गवर्नर जनरल लार्ड मिन्टो ने उसके फलस्वरूप प्रमुख इसाई पादरियों को बन्दी करवा दिया तथा मिशनरियों के धर्म प्रचार पर प्रतिबंध लगा दिया जिससे पादरी वर्ग नाराज हो गया और इंग्लैण्ड में आंदोलन प्रारम्भ किया।

नुरूल्ला एवं नायक ने लिखा है कि– ''मिशनरियों तथा उनके मित्रों ने धर्म प्रचार कार्य में स्वतंत्रता प्राप्त करने के उद्देश्य से इंग्लैण्ड में आन्दोलन प्रारम्भ किया आंदोलन करने वालों में सर्वप्रथम स्थान चार्ल्स ग्राण्ट का था।[iv] चार्ल्स ग्रांण्ट ने 1792 में **''ग्रेट ब्रिट्रेन के एशियाई प्रजाजनों की सामाजिक स्थिति पर विचार''** नामक पुस्तक प्रकाशित की

जिसमें लिखा कि हिन्दू इसलिए गलती है क्योंकि उनमें अज्ञानता है और उनको उनकी गलतियाँ उचित प्रकार से कभी बताई नहीं गयी है।" ग्राण्ट की धारणा थी कि अंग्रेजी भाषा और साहित्य की शिक्षा प्राप्त करने के बाद भारतीयों की विचार धारा में परिवर्तन हो जायेगा और वे ईसाई धर्म के अनुयायी बन जायेंगे यद्यपि उनकी यह धारणा निराधार थी तथापि भारतीयों की शिक्षा के संबंध में उनके प्रस्ताव उनकी दूरदर्शिता के प्रमाण थे। सन् 1806 से 1813 ई. तक मिण्टों भारत का गवर्नर जनरल था उसने 1811 ई में भारतीय शिक्षा के संदर्भ में लिखा जिसकी Minto Minute कहा जाता है उसने इस मिनट में लिखा कि भारतीयों में विज्ञान और साहित्य की शिक्षा बड़ी तीव्रता से समाप्त हो रही है और विद्वानों की कमी होती जा रही है। सूक्ष्म विज्ञानों की शिक्षा समाप्त हो चुकी है। बहुत सी मूल्यवान पुस्तकें लुप्त हो रही है। कम्पनी को इन सब विषयों पर ध्यान देना चाहिए तथा हिन्दुओं के साहित्य का पुनर्निर्माणकरण करना चाहिए। इस दौरान 1813 का चार्टर एक्ट आया जिसमें पहली बार यह कहा गया कि भारतीयों की शिक्षा के लिए कम्पनी की सरकार प्रतिवर्ष एक लाख रूपये व्यय करेगी। साथ ही यह भी कहा गया कि मिशनरियों को भारत में आने और कम्पनी सीमा के अंदर अंग्रेजी शिक्षा एवं ईसाई धर्म का प्रचार–प्रसार करने की छूट दी जाय। [v]

लेकिन उपरोक्त धन का प्रयोग कई वर्षों तक नहीं हो सका इसका कारण यह था कि भारतीय शिक्षा एवं पाश्चात् शिक्षा को लेकर विवाद की स्थिति बन गयी। अंग्रेज विद्वान और शासन अधिकारी ही नहीं बल्कि भारतीय विद्वानों में भी इस बारे में पारस्परिक मतभेद था।

राजाराम मोहन राय भारत में अंग्रेजी शिक्षा को आरम्भ किये जाने के पक्ष में थे। विभिन्न ईसाई पादरी और उदार भारतीय भी इसी पक्ष में थे। उदार भारतीयों के स्वयं के प्रयत्नों से 1817 में कलकत्ता में हिन्दू कालेज की स्थापना की गयी थी तथा ईसाई पादरियों ने भी अंग्रेजी भाषा की शिक्षा के लिए विभिन्न स्थानों पर स्कूल खोले थे। **राजाराम मोहन राय जी** ने वैज्ञानिक शिक्षा के महत्व के पक्ष का समर्थन करते हुए कहा कि–"यदि सरकार की यही नीति है कि देश को अंधकार में रखा जाय तो संस्कृत विद्या पद्धति से अति उत्तम लाभ होगा परन्तु स्थानीय जनता को उन्नत करना उनका उद्देश्य

है तो इस लिए उत्तम यही है कि उदारवादी और ज्ञान युक्त विद्या की पद्धति अपनाई जाय जिसमें गणित, प्राकृतिक दर्शन, रसायन शास्त्र और शरीर रचना इत्यादि सम्मिलित है। [vi]

दूसरी और अनेक भारतीय और अंग्रेज जिसमें विल्सन एवं प्रिंसप का नाम प्रमुख है, ऐसे भी थे जो भारतीय भाषाओं और ज्ञान की शिक्षा पर ही सरकारी धन का व्यय चाहते थे। पर्याप्त समय तक इन दोनों पक्षों में वाद–विवाद चलता रहा। इन विरोधों का प्रभाव हुआ। सरकार ने अंग्रेजी और प्राच्य भाषाओं दोनों के ज्ञान के प्रसार पर बल दिया। उसने कलकत्ता हिन्दू कॉलेज बनाने के लिए अनुदान दिया जिसमें अंग्रेजी माध्यम द्वारा पाश्चात्य विज्ञान की शिक्षा दी जाती थी। साथ ही तीन संस्कृत कॉलेज कलकत्ता, दिल्ली और आगरा में स्थापित किए। इसके अलावा यूरोपीय वैज्ञानिक पुस्तकों को प्राच्य भाषाओं में अनुवाद के लिए भी धन दिया।

शिक्षा की ओर सर्वप्रथम एक महत्वपूर्ण कदम विलियम बेन्टिक के समय में उठाया गया। पाश्चात्य और भारतीय शिक्षा के विषय में जो मतभेद चल रहा था उसका निर्णय इसके समय में हुआ। उसने अपने कानूनी सदस्य मैकाले को विवादित विषय पर निर्णय देने वाली समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया और उससे निर्णय लेने को कहा। मैकाले ने फरवरी 1835 में अपने विचारों को एक विशेष विवरण में प्रस्तुत किया। जिसमें भारतीय शिक्षा और ज्ञान को बहुत हीन बताया और पाश्चात् शिक्षा प्रणाली एवं अंग्रेजी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने का समर्थन किया गया।

मैकाले मिनट में कहा गया था कि पुरातन ज्ञान के कॉलेजों को बन्द कर दिया जाय। सभी शिक्षा अंग्रेजी माध्यम से दी जाय उसके मत से भारतीय भाषायें न तो साहित्यिक है और न वैज्ञानिक। [vii] अरबी एवं संस्कृत का ज्ञान न होते हुए भी मैकाले ने यह वक्तव्य दिया कि–"एक अच्छे यूरोपियन पुस्तकालय का एक खाना सम्पूर्ण भारत एवं अरब के साहित्य से कहीं अधिक मूल्यवान है।" अंग्रेजी भाषा का यशगान और समर्थन करते हुए मैकाले ने कहा–"अंग्रेजी पश्चिम की भाषाओं में भी सर्वोपरि है जो व्यक्ति अंग्रेजी भाषा जानता है। वह उस विशाल ज्ञान–भण्डार को सुगमता से प्राप्त कर लेता है जिनकी विश्व की सबसे बुद्धिमान जातियों ने रचना की है। [viii]

यह मैकाले की पद्धति का प्रयत्न था जिसके द्वारा अंग्रेजी सरकार ने भारत के उच्च वर्ग को अंग्रेजी माध्यम द्वारा शिक्षित करने का प्रयत्न किया। मैकाले का उद्देश्य जन साधारण को शिक्षित करना नहीं था वह स्पष्ट जनता था कि सीमित साधनों से समस्त जनता को शिक्षित करना असम्भव है। वह Infiltration Theory में विश्वास करता था कि अंग्रेजी पढ़े–लिखे लोग एक दुभाषिया श्रेणी" के रूप में कार्य करेंगे और भारतीय भाषाओं और साहित्य को समृद्धिशाली बनायेंगे और इस प्रकार पाश्चात्य विज्ञान तथा साहित्य का ज्ञान जनसाधारण तक पहुँच जाएगा। इस प्रकार मैकाले के इस सिद्धांत का प्राकृतिक परिणाम भारतीय भाषाओं को अंग्रेजी भाषा के सहायक के रूप में बढ़ावा देना था।

इस समय से सरकार ने भारतीय भाषाओं और ज्ञान के विकास की ओर ओर कोई ध्यान नहीं दिया। परन्तु उत्तर–पश्चिम प्रांत (आधुनिक उत्तरप्रदेश) में उपगवर्नर जेम्स टॉमसन ने स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए गाँवों और नगरों में शिक्षा के लिए एक भिन्न योजना को कार्यान्वित किया। उसे लगान और सार्वजनिक सेवा विभाग में कुछ मात्रा में शिक्षित भारतीयों की आवश्यकता थी। इस कारण यद्यपि उच्च शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषा को बनाया गया। तब भी मूलाधार पर शिक्षा का आधार मैकाले द्वारा निर्धारित शिक्षा व्यवस्था ही रही। [ix]

1854 के पश्चात् भारत में शिक्षा की प्रगति –

बोर्ड ऑफ कण्ट्रोल के तत्कालिन अध्यक्ष **चार्ल्स वुड** ने भारतीय शिक्षा के संबंध में एक विस्तृत योजना का सुझाव दिया जिसे प्रायः भारतीय शिक्षा का मैग्नाकार्टा कहा जाता है, इसकी सिफारिशें निम्न थीं–

1. सरकार की शिक्षा नीति का उद्देश्य पाश्चात्य शिक्षा का प्रसार है।
2. उच्च शिक्षा अंग्रेजी माध्यम से हो तथा निम्न शिक्षा में भारतीय भाषाओं को भी प्रोत्साहित किया जाय।
3. गाँवों में देशी भाषा पर आधारित प्राथमिक पाठशालायें स्थापित की जाय जिला स्तर पर ऐंग्लों–वर्नाकुलर हाई स्कूल और इण्टर मीडिएट की कक्षाएँ खोली जायें।

4. निजी प्रयत्नों को प्रोत्साहन देने के लिए Grant in Aid की पद्धति की बात कही गयी जो संस्थाएँ शिक्षा का उचित स्तर रखती हो।

5. कम्पनी के पाँचों प्रान्तों में लोक शिक्षा विभाग स्थापित हो जो सरकार को वार्षिक रिपोर्ट दें।

6. लंदन विश्वविद्यालय के आधार पर कलकत्ता, मुम्बई एवं मद्रास में तीन विश्वविद्यालय स्थापित किए जाए जो परीक्षाएँ लें एवं उपाधियाँ दें।

7. इसमें व्यावसायिक शिक्षा के महत्व और प्राविधिक विद्यालयों की स्थापना की आवश्यकता पर बल दिया गया।

8. इंग्लैण्ड नमूने पर Teacher's Training Institutions की स्थापना की सिफारिश की गयी थी।

9. इसके महिला शिक्षा का भी समर्थन किया गया।

इसकी सभी सिफारिश लागू कर दी गयीं। 1855 में लोक शिक्षा विभाग स्थापित कर दिया गया। 1857 में बम्बई, कलकत्ता, मद्रास में विश्वविद्यालय स्थापित किये गये मुख्यतः श्री बेटन के प्रयत्नों से कुछ महिला पाठशालाओं की स्थापना की गई और सरकार की अनुदान और निरीक्षण पद्धति के अधीन लाई गई।[ग]

वुड की सिफारिशों का लगभग 50 वर्षो तक बोलबाला रहा भारतीय शिक्षा का इस काल में तीव्र गति से पाश्चात्यीकरण हुआ और बहुत सी संस्थाएँ स्थापित की गयी। इन दिनों संस्थाओं के मुख्याध्यापक और आचार्य प्रायः यूरोपीय ही होते थे। परन्तु ईसाई मिशनरी संस्थाओं ने भी अपना योगदान दिया। शनैः–शनैः निजी भारतीय प्रयत्न इस क्षेत्र में दिखाई देने लगे। इन सब के फलस्वरूप भारत की शिक्षा का ढ़ाँचा पाश्चात्य शिक्षा पद्धति पर आधारित होता चला गया।

सरकार ने 1854 के बाद हुई शैक्षिक प्रगति की समीक्षा करने के लिए डब्ल्यू. डब्ल्यू. हन्टर की अध्यक्षता में एक आयोग नियुक्त किया। इसके कार्य क्षेत्र में प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा ही था विश्वविद्यालयीन शिक्षा इसके कार्य क्षेत्र से बाहर था तथापि इसने उच्च शिक्षा के बारे में भी सुझाव दिये इसके मुख्य सुझाव निम्न थे–

सरकार को प्राथमिक शिक्षा के सुधार और विकास की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। यह शिक्षा स्थानीय भाषा में हो। निजी प्रयत्नों का स्वागत हो लेकिन प्राथमिक शिक्षा उसके बिना भी दी जानी चाहिए इन प्राथमिक पाठशालाओं का नियंत्रण नव संस्थापित जिला और नगर बोर्डों को दे दिया जाय। शिक्षा के लिए वे उपकर भी लगा सकते थे। माध्यमिक शिक्षा दो प्रकार की होनी चाहिए–(1) साहित्यिक (2) व्यावसायिक। दोनों के लिए भिन्न–भिन्न शिक्षालय हो। निजी प्रयत्नों की शिक्षा के क्षेत्र में पूर्ण रूपेण बढ़ावा मिलना चाहिए इसके लिए सहायता अनुदान में उदारता तथा सहायता प्राप्त पाठशालाओं को सरकारी पाठशालाओं के बराबर मान्यता प्राप्त करने इत्यादि के लिए अवसर होने चाहिए। जितना शीघ्र हो सके सरकार स्वयं को माध्यमिक और कालेज शिक्षा से पृथक कर ले। उन पर नियंत्रण रखे उन्हें आर्थिक सहायता दे।

आयोग ने प्रेसीडेंसी नगरों (बम्बई कलकत्ता, मद्रास) के अतिरिक्त अन्य सभी स्थानों पर महिला शिक्षा के पर्याप्त प्रबंध न होने पर खेद प्रकट करते हुए उसे बढ़ावा देने को कहा। इस रिपोर्ट के बाद दो दशकों में माध्यमिक और कालेज की शिक्षा का तीव्रता से विकास हुआ उसी समय ऐसे विश्वविद्यालय स्थापित हुए जो केवल परीक्षा ही नहीं लेते थे बल्कि जहाँ शिक्षा की व्यवस्था भी गयी 1882 में पंजाब विश्वविद्यालय स्थापित हुआ 1887 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। लेकिन प्राथमिक शिक्षा पर सरकार ने अधिक ध्यान नहीं दिया माध्यमिक और कॉलेजों की शिक्षा के विस्तार में भी सरकार का योगदान कम ही रहा उनका विकास मुख्यतया सामाजिक संस्थाओं और निजी प्रयत्नों से हुआ।

बीसवी शताब्दी के आरम्भिक वर्ष भारत में बढ़ती हुई राजनैतिक व्यग्रता और शिक्षा के क्षेत्र में वाद–विवाद के वर्ष थे। शिक्षा संस्थाओं में राजनैतिक बेचैनी की क्रिया और प्रतिक्रिया हुई और सरकार का यह विचार था कि निजी प्रबंध के अधीन संस्थाओं में स्तर गिरे हैं और यहाँ बहुत अधिक अनुशासनहीनता है और ये संस्थाएँ राजनैतिक क्रांतिकारियों को उत्पन्न करने के लिए कारखाने मात्र बन गई है। राष्ट्रवादियों ने यह तो स्वीकार किया कि स्तर गिर गए हैं परन्तु इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित किया कि सरकार निरक्षरता को दूर करने का भरसक प्रयत्न नहीं कर रही है। लार्ड कर्जन ने अपने प्रशासन को सुधारने के स्वाभाविक जोश में भारतीय शिक्षा को भी सुधारने का प्रयत्न किया। इसलिए

नुरुल्ला व नायक ने यह घोषित किया है कि–"कर्जन से श्रेष्ठतर मानसिक क्षमता का कोई वायसराय भारत में उस समय तक कभी नहीं आया था।"[गप] कर्जन ने मैकाले की नीति की आलोचना की और कहा कि उसमें देशी भाषाओं के विरूद्ध पक्षपात था। उसने हीन स्तर के अध्यापक वर्ग और परीक्षाओं पर बल देने वाली शिक्षा पद्धति की भी कटु आलोचना की परन्तु उसका मुख्य उद्देश्य राजनैतिक था और केवल आँशिक रूप से शैक्षिक। वह शिक्षालयों को सरकारी नियंत्रण में लाने को उत्सुक था उसका विचार था कि भारत की शिक्षा संस्थाएँ मुख्यतया विश्वविद्यालय राजनैतिक दलबन्दियों अथवा षड़यंत्रों के केन्द्र बन गये थे। निश्चय ही शिक्षित भारतीयों में राष्ट्रीयता की भावना का प्रादुर्भाव हो गया था और वे अंग्रेजी साम्राज्यवाद के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकते थे इस कारण कर्जन का मुख्य आशय शिक्षा संस्थाओं को सरकारी नियंत्रण में लेकर भारतीयों की राजनैतिक क्रियाओं को दुर्बल करने का था यद्यपि बहाना उसने यह लिया कि शिक्षा का स्तर गिरता जा रहा है और उसमें सुधार की आवश्यकता है।[xii] राष्ट्रवादियों ने इसे साम्राज्यवाद को दृढ़ करने और राष्ट्रीयता की भावना के विकास को समाप्त करने का प्रयत्न कहा।

1901 में कर्जन ने शिमला में समस्त भारत के उच्चतम शिक्षा और विश्वविद्यालय अधिकारियों का एक सम्मेलन बुलाया जिसमें 150 प्रस्ताव पारित हुए तदनन्तर विश्वविद्यालयों की स्थिति का अनुमान लगाने हेतु टामसरैले की अध्यक्षता में एक आयोग नियुक्त किया। प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा इसकी परिधि से दूर थी।

1906 में बड़ौदा जैसी प्रगतिशील रियासत ने अपने यहाँ निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा आरम्भ कर दी। भारतीय राष्ट्रीय नेताओं ने सरकार से यह माँग की कि वह प्राथमिक शिक्षा का उत्तरदायित्व इसी भाँति अपने हाथों में ले ले। 1910 से 1913 तब विधान परिषद में **गोपाल कृष्ण गोखले** ने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए बहुत से प्रयत्न किये। फरवरी 1913 के प्रस्ताव से सरकार ने अनिवार्य शिक्षा के सिद्धान्त को तो स्वीकार नहीं किया अपितु निरक्षरता समाप्त करने की नीति को अवश्य स्वीकार किया। उसने प्रांतीय सरकार को प्रेरणा दी कि वह समाज के निर्धन तथा अधिक पिछड़े हुए वर्ग को निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा देने का प्रबंध करे। इस क्षेत्र में अशासकीय प्रयत्नों को भी समर्थन दिया गया। माध्यमिक शिक्षा के लिए पाठशालाओं को भी अधिक उत्तम बनाने का सुझाव

दिया गया। विश्वविद्यालय के संबंध में यह सुझाव स्वीकार किया गया कि प्रत्येक प्रांत में एक विश्वविद्यालय अवश्य होना चाहिए और विश्वविद्यालयों को शिक्षण कार्य अधिकाधिक करना चाहिए।[xiii]

निष्कर्ष

17वीं सदी में भारत आयी ब्रिट्रिश कम्पनी का मूल उद्देश्य व्यापार करना था लेकिन धीरे–धीरे उसमें यहाँ की आपसी फूट का लाभ उठाकर 1757 में प्लासी युद्ध एवं 1764 में बक्सर युद्ध के उपरांत बंगाल सूबे में अपना शासन स्थापित कर लिया। 1857 तक लगभग पूरा भारत उनके अधीन हो गया। उनकी गलत नीतियों के कारण 1857 की असफल क्रांति हुई जिसे इतिहासकारों ने भारत में राष्ट्रीय चेतना की जागृति की शुरूआत मानते है। इस दौरान देश में अंग्रेजी शिक्षा का काफी प्रचार हो चुका था। 1858 तक कलकत्ता, मुम्बई एवं मद्रास में यूरोपीय पद्धति के विश्वविद्यालय भी स्थापित हो चुके थे। इस शिक्षा का उस समय कुछ भी उद्देश्य रहा हो परन्तु इससे भारत में एक नई चेतना जागृत हुई। सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक सभी क्षेत्रों में 1885 में भारत में 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' की स्थापना हुई। जिसका एक उद्देश्य ब्रिट्रिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वशासन के अधिकार प्राप्त करना था। कालान्तर में यह संस्था राष्ट्रीय आंदोलन का केन्द्र बन गयी। 1886 कांग्रेस मंच से ही जहाँ पं. मदन मोहन मालवीय ने हिन्दी–हिन्दू–हिन्दुस्तान' का नारा बुलंद किया 1889 में इसी मंच से गंगाधर तिलक जी ने घोषणा की कि–"स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। स्वामी विवेकानन्द एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के प्रयासों से देश में राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ। इसका वास्तविक रूप 1905 के बंगाल के विभाजन" में देखने को मिला। सम्पूर्ण देश में इस विभाजन का विरोध किया गया। 1905 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में बंगाल विभाजन के विरोध में ब्रिटिश शासन के विरूद्ध राष्ट्रीय आंदोलन प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया।

संदर्भ

i Tara Charadra, History of the Freedom Movement in India, Volome Two, Pulblications Division.

ii नुरूल्ला एवं नायक – हिस्ट्री ऑफ एजूकेशन इन इण्डिया

iii बी.एल.ग्रोवर– आधुनिक भारत का इतिहास

iv नुरूल्ला एवं नायक – हिस्ट्री ऑफ एजुकेशन इन इण्डिया

v एल.पी. शर्मा – अधुनिक भारत का इतिहास

vi बी.एल. ग्रोवर – आधुनिक भारत का इतिहास

vii बी.एल. ग्रोवर – आधुनिक भारत का इतिहास

viii पी.डी. पाठक – भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ

ix एल.पी. शर्मा – आधुनिक भारत का इतिहास

x वी.एल. ग्रोवर – आधुनिक भारत का इतिहास

xi पी.डी. पाठक – भारतीय शिक्षा एवं उसकी समस्याएँ

xii एल.पी. शर्मा – आधुनिक भारत का इतिहास

xiii वी.एल. ग्रोवर आधुनिक भारत का इतिहास